3. तीसरा अध्याय:

लोकगीत: स्वरूप एवं वर्गीकरण

3.1 अर्थ एवं स्वरूप:

सामान्यत: लोकगीत लोक-जीवन की संगीतात्मक काव्य रचनाएँ हैं, जो मुख्यत: लिपिबद्ध न होकर मौखिक- परम्परा-रूप में सदैव अविरत रहती हैं । लोक-जीवन का सूक्ष्मतर स्पन्दन इन भावपूर्ण लोकगीतों में सहज ही ढूँढा जा सकता है । लोकगीतों का रचयिता प्राय: अज्ञात होता है तभी तो इन गीतों को जनसाधारण के गीत कहा जाता है । लोकगीत के अर्थ एवं स्वरूप-निर्धारण के लिए विभिन्न विद्वानों ने अपने भिन्न-भिन्न मत व्यक्त किए हैं, जिनमें से प्रमुख एवं महत्वपूर्ण निम्नवत् हैं :-

"ग्रामगीत प्रकृति के उद्गार हैं । इनमें अलंकार नहीं केवल रस है । छन्द नहीं केवल लय है । लालित्य नहीं केवल माधुर्य है । ग्रामीण मनुष्यों के, स्त्री पुरूषों के मध्य में हृदय नामक आसन पर बैठ कर प्रकृति गान करती है । प्रकृति के वे ही गान ग्रामगीत हैं ।"[1]

"आदिम मनुष्य के गानों का नाम लोकगीत है । मानव जीवन की, उसके उल्लास की, उसकी उमंगों की, उसकी करूणा की, उसके समस्त सुख-दु:ख की-कहानी इनमें चित्रित है ।"[2]

"वह गीत जो लोक-मानस की अभिव्यक्ति हो, अथवा जिसमें लोक-मानसाभास भी हो; लोक-गीत के अन्तर्गत आएगा । लोकगीतों के शब्दों में लोक-मानसपरक अथवा आदिम प्रवृत्ति के जैसा एक प्रभाव होता है, जिसकी व्याख्या नहीं की जा सकती, केवल जिसे अनुभव किया जा सकता है । उसमें

---

1. रामनरेश त्रिपाठी, कविता कौमुदी: ग्राम गीत-1 (प्रयाग: हिन्दी मन्दिर, 1956), पृ0 1-2
2. सूर्यकरण पारीक, राजस्थान के लोकगीत (प्रयाग: हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1956), पृ0 1

आदिम- मानवीय भावना के उत्तराधिकरण का एक रहस्य छिपा रहता है। - - - अपनी मूल-मानवीय मानसता के सत्व में उन्हें समाहित कर अपनी परम्परा और निरन्तरता बनाता है।"[3]

"लोक में प्रचलित, लोक द्वारा रचित एवं लोक के लिए लिखे गए गीतों को लोकगीत कहा जा सकता है। इसका रचनाकार अपने व्यक्तित्व को लोक-समर्पित कर देता है।"[4]

"लोकगीत विधादेवी के बौद्धिक उद्यान के कृत्रिम फूल नहीं, वे मानो अकृत्रिम नि:सर्ग के श्वास-प्रश्वास है। सहजानन्द से सच्चिदानन्द में विलीन हो जाने वाली आनन्दमयी गुफाएँ हैं।"[5]

"समाज में लोक द्वारा किसी विशिष्ट अवसर, परिस्थिति, उत्सव, अनुष्ठान एवं संस्कार के समय होने वाली अनुभूतियों को मधुर लय-युक्त सामूहिक अभिव्यक्ति को लोक गीत कहते हैं। इनमें जनजीवन की वास्तविक भावनाएँ प्रतिबिम्बित रहती हैं। लोकगीतों के माध्यम से मनुष्य के पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन का भावमय चित्र रहता है। लोकजीवन का दर्शन, उसकी संस्कृति, सामूहिक चेतना की पुकार, शारिरीक तथा मानसिक व्यापार आदि सभी का यथार्थ वर्णन लोकगीतों में रहता है।"[6]

---

3. सत्येन्द्र गुप्त, लोकसाहित्य विज्ञान (आगरा: शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, 1971), पृ0 327
4. श्रीराम शर्मा, लोकसाहित्य: सिद्धांत और प्रयोग (आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर, 1973), पृ0 39
5. सदाशिव पड़के, लोकसंस्कृति अंक (सम्मेलन पत्रिका) (प्रयाग: सं0 2010), पृ0 250-51
6. बैरिस्टर सिंह यादव, हिन्दी लोकसाहित्य में हास्य और व्यंग्य (लखनऊ: राष्ट्रीय साहित्य सदन, 1978), पृ0 8

"लोक-गीत लोक कंठ से किस दिन, किस क्षण फूटा यह बतलाना कठिन ही नहीं, आज असंभव प्राय: है । कहा जा सकता है कि जब से पृथ्वी पर मानव बसने लगा, तभी से उसके मुख से गीतों के बोल भी फूटने लगे । ये गीत उसके हर्ष-विषाद, जीवन-मरण आदि के साथ अभिन्न रूप से मुखरित होते रहे हैं । यह अवश्य है कि युग-परिवर्तन के साथ आदि मानव के गीतों की बाह्य काया भी परिवर्तित होती रही है, पर उसके मूल भावों की व्यंजना में कोई अन्तर नहीं पड़ा है । नैसर्गिक भावावेश के क्षणों में फूटने वाले इन लोकगीतों की धारा विविध भाषाओं में प्राप्त परम्पराओं के रूप में अद्यावधि प्रवाहित होती चली आ रही है । इसकी गति अविच्छिन्न है । यह अनन्तकाल तक प्रवाहित होती होगी ।"[7]

"लोकगीत शब्द के तीन अर्थ हो सकते है - लोक में प्रचलित गीत, लोक-निर्मित गीत, लोक-विषयक गीत ।"[8]

"वह गीत जो लोक-मानस की अभिव्यक्ति हो, अथवा जिसमें लोक मानसाभास भी हो, लोकगीत के अन्तर्गत आता है ।"[9]

"लोकगीतों में निजीपन तो होता है परन्तु लोकमानस को पसन्द आने वाले विषय के साथ सम्बन्धित होने के कारण उनमें साधारणीकरण की भावना साहित्यिक गीतों की अपेक्षा अधिक होती है ।"[10]

---

7. सम्पत्ति अर्याणी, मगधी लोकसाहित्य(पटना: हिन्दी साहित्य संसार, 1965), पृ0 9
8. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश(बनारस: ज्ञानमण्डल लिमिटेड, सं0 2015), पृ0 689
9. सत्येन्द्र गुप्त, लोक साहित्य विज्ञान(आगरा: शिवालाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, 1962), पृ0 390
10. गुलाबराय, काव्य के रूप (दिल्ली: आत्माराम एण्ड सन्ज, 1964), पृ0 123

"लोकोगीत आर्येत्तर सभ्यता के वेद हैं ।"[11]

"लोकगीत किसी संस्कृति के मुँह-बोलते चित्र है ।"[12]

"लोकगीत गाँव-देहातों में गाए जाने वाले जन-साधारण के वे गीत जो परम्परा से किसी जन-समाज में प्रचलित तथा लय-प्रधान हो जैसे-भिन्न भिन्न ऋतुओं में त्योहारों पर अथवा धार्मिक उत्सवों, संस्कारों आदि के समय गाए जाने वाले गीत हैं ।"[13]

"लोकगीत मानव-हृदय की प्रकृत अभिव्यक्ति हैं । भावों में प्रकट करने के लिए वाणी की लयात्मक स्वरूप को लोकगीतों में प्रमुखता दी जाती है । लोकगीतों में लोक-मानव के रंजन की भावना भी होती है ।"[14]

"जनसाधारण के बीच रचे और गाए जाने वाले गीत जो उनके सुख-दुःख हर्ष-उल्लास और संघर्ष को व्यक्त करते हैं और समय-समय पर धार्मिक उत्सवों, खेतों, जंगलों, मेलों में गाए जाते हैं ।"[15]

---

11. हजारी प्रसाद द्विवेदी, छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का परिचय (पटना: बिहार-राष्ट्र भाषा परिषद्, 1961), पृ० 5
12. देवेन्द्र सत्यार्थी, धरती गाती है (दिल्ली: राजहंस प्रकाशन, 1951) पृ० 18
13. श्री रामचन्द्र वर्म्मा, सं०, मानक हिन्दी कोश-4 (प्रयाग: हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1965), पृ० 597
14. सरोजनी रोहतगी, अवधी का लोक साहित्य (दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 1971), पृ० 486
15. गोविन्द चातक, सं०, आधुनिक हिन्दी शब्द-कोश (दिल्ली: तक्षशिला-प्रकाशन, 1986), पृ० 486

"लोकगीत, लोकजन द्वारा, विशेष परिस्थिति, स्थल, कर्म तथा संस्कार के समय हुई अनुभूतियों की लयपूर्ण सामूहिक अभिव्यक्ति है । - - - इनमें मनुष्य मात्र के पारिवारिक और सामाजिक जीवन का सामयिक तथा भावनात्मक चित्रण रहता है - - - लोकगीतों में सामूहिक चेतना की पुकार मिलती है तथा जीवन में समय-समय पर होने वाली सामयिक क्रांतियों का आभास मिलता है । लोकगीतों मेंजनता के जीवन का इतना विशद चित्रण होता है कि उनमें किसी देश की मूल संस्कृति तथा जन-जीवन का पूर्ण चित्रण मिल जाता है ।"[16]

निष्कर्षतः लोक-गीत अनाम कवि की मौखिक रचनाएँ होती हैं, जिनमें गेयता तथा लयात्मकता होती हैं तथा जिनके द्वारा लोक-जीवन के विभिन्न भावों का रहस्योद्घाटन होता है । लोकगीतों में वैयक्तिकता की अपेक्षा सामूहिकता की प्रधानता होती है । लोकगीत साधारण जन की बोलचाल की भाषा में रचे तथा गाए जाते हैं । ये गीत किसी व्यक्ति-विशेष की सम्पत्ति न होकर संपूर्ण समाज की सम्पत्ति हैं । इन लोकगीतों में प्राचीन संस्कृति के अवयवों का अंकन हुआ करता है ।

समग्रतः लोक-गीत लोक के, लोक के द्वारा लोक के लिए देय अमूल्य उपहार हैं, जिनको पीढ़ी-दर-पीढ़ी किसी भी समाज अथवा जाति के द्वारा सँवारा, सँजोया तथा संरक्षित किया जाता है ।

3.2 उद्भव एवं विकासः-

लोकगीतों के उद्भव एवं विकास के विषय में विभिन्न विद्वानों में मतवैभिन्नय रहा है जैसे - लोगीतों का सर्जक कौनहै ? इन गीतों में बृद्धि अथवा विकास कैसे हुआ तथा होता रहा है ? इत्यादि सभी प्रश्न विवादास्पद हैं,

---

16. सत्यागुप्त, खड़ी बोली का लोक साहित्य(इलाहाबादः हिन्दुस्तान एकेडमी, 1964), पृ0 29

जिनका उत्तर खोजना अत्यन्त आवश्यक है । कुछविद्वानों का कहनाहै कि लोकगीतों का सामूहिक रीति से सृजन होता है । कुछ का मत है कि लोक-गीतों का सर्जक कोई एक व्यक्ति होता है । अतः लोक गीतों का रचयिता एक या दो से अधिक भी हो सकते हैं । विभिन्न विद्वानों ने लोकगीतों के उद्गम तथा विकास के विषय में अपने मत निम्नवत् शब्दों में व्यक्त किए हैं :-

"किसी भी जाति अथवा भाषा के लोकगीतों के अध्ययनोंपरान्त यह स्पष्टतः ज्ञात होगा कि लोकगीतों की उत्पत्ति सामूहिक-विधि से नहीं हुई है अर्थात् लोगों ने एकत्र होकर किसी गीत का निर्माण नहीं किया है । निर्माण प्रक्रिया में सदैव समुदाय से अधिक समुदाय का व्यक्ति सक्रिय रहा है, जिसका नाम तथा व्यक्तित्व युगयुगान्तर के भयंकर अंधकारमय गर्भ में खो गया है और जिसे हम आज लाख यत्न करने पर भी खोज निकालने में असमर्थ हैं । वस्तुतः इसी कारण लोकगीत बहुधा एक "दैव्य-वाक्य" सा प्रतीत होता है ।"[1]

"कोई भी कृति ऐसी नहीं है, जिसका कोई रचयिता न होया जो सबकी रचना हो ।"[2]

"आनन्द और शोक मानव-जीवन के आधारभूत तत्व हैं । शोक की पीड़ा से मनुष्य से उठता है और प्रसन्नता के क्षणों को वह नाच-गाकर दूसरों में भी बाँटना चाहता है । आदिम मानव ने जब भाषा को अपनाया होगा, तो प्रसन्नता के क्षणों में अनायास ही उसके हृदय में रसात्मक अनुभूति भी हुई होगी । इन क्षणों में जो कुछ उसने लयात्मक ढंग से कहा होगा, वही सृष्टि का प्रथम गीत रहा होगा । यह गीत जब श्रोताओं ने रचयिता का नाम जाने

---

1. सत्येन्द्र गुप्त, लोक साहित्य विज्ञान (आगरा: शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, 1962), पृ0 390
2. "There have never been works which could have been composed by no one or by the whole people."
Smith Translator, Russian Folklore (Newyork: Macmillion Co, 1956), P.8.

बिना, अपने ही मन के उद्गार समझ कर गाया होगा, तो लोक में प्रचलित होकर वह लोकगीत बन गया होगा । लोकगीत के निर्माण तथा प्रचलन में आज भी यही नियम अपरिवर्तित रूप से विद्यमान है ।"[3]

पण्डित त्रिपाठी ने स्वर्गीय श्रबेरचन्द मेधाणी के गुजराती कथन का भावानुवाद करते हुए लिखा है:- "जिस प्रकार कोई नदी किसी घोर अन्धकारमयी गुफा से बहकर आती है और किसी को उसके उद्गम का पता न हो, ठीक यही दशा लोकगीतों की है ।"[4]

"लोकगीत ग्रामीण जगत् की प्राकृतिक फुलवाड़ी हैं, इनका क्षेत्र इतना विस्तृत होता चला जाता है कि वह समान भाषा और संस्कृति वाले शहरों को भी अपने में संजो लेता है ।"[5]

"लोक गीतों का इतिहास लिखना यद्यपि असंभव नहीं परन्तु कठिन अवश्य है ।"[6]

"वास्तव में लोकगीत उतना ही प्राचीन है जितना आदिम-मानव ।"[7]

"आदि मानव ने अपने आपको जिस रूप में पाया उसी रूप में प्रकृति को भी देखा । प्रकृति में प्रजनन की शक्ति को देखकर उसे दुःख का अनुभव हुआ । इस प्रकार उसके लिए जन्म सुखदायक और मरण दुःखदायक सिद्ध हुआ । इन दोनों

---

3. बंशीराम शर्मा, किन्नर लोक-साहित्य (बिलासपुर: ललित कला प्रकाशन, 1976), पृ० 44-45
4. रामनरेश त्रिपाठी, कविता कौमुदी-5 (ग्रामगीत), प्रयाग: हिन्दी मन्दिर, 1952), पृ० 11
5. बंशी शर्मा, किन्नर लोक-साहित्य (बिलासपुर: ललित कला प्रकाशन, 1976), पृ० 45
6. स्मोथ अनु०, रशियन फॉकलोयर (न्यूयार्क: मेकमिलन एण्ड कम्पनी, 1956), पृ० 18
7. एन्साइक्लोपिडिया ब्रिटेनिका (लन्दन), पृ० 448

अवस्थाओं में अपने मन को उत्साह एवं सांत्वना देने के लिए उसने जो भावाभिव्यंजना प्रगट की वे ही भाव लोकगीत बन गए ।"[8]

वास्तव में लोकगीत उस प्राकृतिक जल-स्त्रोत की तरह हैं, जो निरन्तर गतिशील रहता है, तथा जिसके आदि मध्य और अन्त को ढूँढना दुष्कर है । यद्यपि लोकगीतों का सृजन व्यक्ति द्वारा ही होता है किन्तु उस व्यक्ति-विशेष को ढूँढना अथवा इसके मूल लेखकों को खोजना कठिन ही नहीं प्रायः असंभव भी है । लोकगीत मौखिक होने के कारण उन समस्त लोगों की साँझी धरोहर हैं, जो इन्हें परम्परागत, रूप से जीवित रखते हैं ।

3.3 महत्व एवं विशेषताएँ:

लोकगीतों का सामान्यतः साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, भौगोलिक एवं भाषिक इत्यादि दृष्टियों से विशेष महत्व है । अनेक विद्वानों ने लोक साहित्य की दृष्टि से लोकगीतों का महत्व स्वीकारते हुए अपने मत को निम्न वाक्यों में वर्णित किया है :-

"भारत वर्ष का कोई भी चित्र भारतीय प्रथाओं, रीति-रिवाजों और हमारे आन्तरिक जीवन की मनोवैज्ञानिक गहराई को इतने स्पष्ट तथा सशक्त ढंग से व्यक्त नहीं कर सकता, जितना की लोकगीत कर सकते हैं ।"[1]

"आज गाँव के घर-घर में लोकगीतों की गूँज नहीं होती, उसके रस की मादकता जनता के हृदय को आत्म-विभोर नहीं करती तो संभवतः साहित्य को संस्कृति का प्रतीक बनने का श्रेय न मिल पाता और न मानव को मानवता ही सुरक्षित रह सकती । साहित्य लोकगीतों से अनुप्राणित होकर स्वाभाविकता

---

8. तेज नारायण शास्त्री, मैथिली लोकगीतों का अध्ययन (आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर, 1962), पृ० 17

1. देवेन्द्र सत्यार्थी, धूली धूसरित मणियाँ (दिल्ली: राजहँस प्रकाशन, 1952), पृ० 20-21

प्राप्त कर सकता है - वही साहित्य सृष्टा बन सका क्योंकि लोकगीत अपने आप में पूर्ण हैं, कृत्रिमता से दूर है ।"[2]

लोकगीतों की साहित्यिक महत्ता के विषय में निम्न कथन ध्यातव्य हैं - "हिन्दी की प्राचीन व नवीन कविता की शैली पर उनका प्रभाव पड़ेगा । इनमें कल्पित नहीं स्वाभाविक रस का विकास हुआ है । अतएव उसका प्रभाव भी शीघ्र और स्थायी होता है । मुझे आशा है कि वर्तमान कविगण गीतों का अध्ययन कर अपनी शैली में परिवर्तन करेंगे ।"[3]

लोकगीतों में भाषा वैज्ञानिक महत्व स्वीकारते हुए निम्न कथन द्रष्टव्य हैं:- "भाषा-विज्ञान का विद्यार्थी लोकगीत के एक-एक शब्द को उठाकर देखता है और मानव संस्कृति के किसी लुप्त पृष्ठ को टटोलना चाहता है । किस प्रकार एक शब्द सहस्त्रों कोस की यात्रा करता हुआ इधर से उधर चला, किस प्रकार यह थोड़े बहुत बदले हुए रूप में भी अपनी मौलिकता का बखान कर रहा है ।"[4]

लोकगीत की विशेषताओं के विषय में विभिन्न विद्वानों द्वारा दिए मत निम्नवत् हैं :-

लोकगीतों में गेयता की प्रधानता रहती है । लोकगीत एवं लोक-संगीत का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध स्थापित करते हुए परमार ने इन दोनों की निकटता प्रतिपादित की है - "अतएव चिरपरिचित मुहावरे में कहें, तो लोकगीत एवं लोक-संगीत एक ही रथ के दो पहिये हैं - एक की अनुपस्थिति में दूसरा अनुपयोगी है ।"[5]

---

2. तेज नारायण शास्त्री, मैथिली लोकगीतों का अध्ययन (आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर, 1960), पृ० 37
3. रामनरेश त्रिपाठी, कविता कौमुदी-1 (ग्रामगीत), प्रयाग: हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1956), पृ० 29
4. देवेन्द्र सत्यार्थी, बेला फूले आधीरात (दिल्ली: राजहँस प्रकाशन, 47), पृ०12
5. श्याम परमार, मालवी लोक-साहित्य (दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1953), पृ० 44

"लोकगीतों की आत्मा लोक संगीत है - - - लोकगीत सरल, सुन्दर, अनुभूतिमय तथा संगीतमय होते हैं । कदाचित् ही कोई ऐसा लोकगीत हो जो संगीत से अनुप्राणित न हुआ हो - - - संगीत के बिना लोकगीत प्राण-रहित शरीर के समान है ।"[6]

"सरल लोकजीवन में वाद्य प्रत्येक स्थान पर वर्तमान रहते हैं, प्रातःकाल जब स्त्रियाँ चक्की चलाती हैं, तो उसकी चरचराहट उनके स्वर में मिलकर वाद्य (लय) का रूप धारण कर लेती है । बच्चा पैदा होने पर माताओं की प्रसन्नता के मूक स्वर को थाली वाद्य द्वारा स्वर मिल जाते हैं - - - गाड़ी हाँकने वाला व्यक्ति बैलों को घंटियों और खुरों की आवाज से ही अपना स्वर मिला लेता है ।"[7]

वास्तव में लोकगीत में संगीत अथवा लय का आपस में अटूट सम्बन्ध है । दोनों का अस्तित्व एक-दूसरे में निहित है । बिना संगीत के लोकगीतों में माधुर्य की कल्पना तक नहीं की जा सकती है । अतः गेयता लोकगीतों की प्रमुख विशेषता है । इसी के साथ लोकगीतों का ऐतिहासिक, सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं भाषावैज्ञानिक दृष्टि से विशिष्ट महत्व है । जन-मन की सरल-दुर्लभ दोनों प्रकार की वृत्तियाँ इन लोकगीतों में अन्वेषित की जा सकती हैं । वस्तुतः लोकगीत मानवीय जीवन के विशुद्ध प्रतिबिम्ब हैं ।

3.4 वर्गीकरण:-

किसी भी क्षेत्र के लोक साहित्य का सर्वांगीण अध्ययन एवं विवेचन करने के लिए उसको विभिन्न वर्गों में पृथक्-पृथक् रूप से विभक्त करना आवश्यक हो

---

6. कृष्ण उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका (इलाहाबाद: साहित्य भवन प्रा०लि० 1970), पृ० 236
7. श्रीराम शर्मा, लोक-साहित्य: सिद्धांत और प्रयोग (आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर, 1975), पृ० 295

जाता है । यही बात लोकगीतों के सम्यक् अध्ययन एवं विश्लेषण पर लागू होती है । अतः लोकगीतों का संग्रह या शोधात्मक अध्ययन करने वाले सभी विद्वानों ने लोकगीतों का वर्गीकरण किया है, यद्यपि लोकगीतों के व्यापक विषय को कुछेक सीमाओं में बाँधना कठिन कार्य है ।

उपाध्याय ने लोकगीतों के विषय विस्तार को स्वीकारा है, उनके ही शब्दों में - "लोकगीतों का वर्ण्य विषय इतना अधिक व्यापक है कि उनका वर्गीकरण कठिन हो सकता है ।"[1]

हिन्दी-जगत् में किसी सर्वमान्य वर्गीकरण के अभाव पर चिन्ता व्यक्त करते हुए मोहन लाल बाबुलकर का मत है कि "लोकगीतों का विभिन्न विद्वानों द्वारा क्षेत्र-विशेष के अध्ययन के आधार पर ही वर्गीकरण किया गया है । अध्ययन और स्थान विशेष के विश्लेषण के कारण ऐसा कोई भी वर्गीकरण उपलब्ध नहीं होता है, जिसे पूर्ण वैज्ञानिक कहा जा सके ।"[2]

लोक साहित्यकारों ने लोकगीतों का विभाजन इस प्रकार किया है:-

शास्त्री ने मैथिली लोकगीतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :-

1. "धार्मिक आदर्श और मैथिली लोकगीत
2. सामाजिक आदर्श और मैथिली लोकगीत
3. पारिवारिक आदर्श " " "
4. राजनीतिक-आदर्श " " "
5. रहन-सहन के आदर्श और मैथिली लोकगीत ।"[1]

---

1. चिन्तामणि उपाध्याय, मालवी लोकगीत: एक विवेचनात्मक अध्ययन (दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1953), पृ0 60
2. मोहनलाल बाबुलकर, गढ़वाली लोक साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन (प्रयाग: हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1964), पृ0 11
1. तेजनारायण शास्त्री, मैथिली लोकगीतों का अध्ययन (आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर, 1962), पृ0 64

त्रिपाठी ने ग्रामगीतों का वर्गीकरण निम्न ग्यारह श्रेणियों में किया है:-

1. "संस्कार सम्बन्धी गीत
2. चक्की और चरखे के गीत
3. धर्म गीत
4. ऋतु-सम्बन्धी गीत
5. खेती-गीत
6. भिखमंगी के गीत
7. मेले के गीत
8. जाति-गीत
9. वीर गाथा
10. गीत-कथा
11. अनुभव के वचन।"[2]

राजस्थानी लोकगीतों के विद्वान पारीक ने लोकगीतों का क्षेत्र-विस्तार दिखाते हुए अपनी पुस्तक राजस्थानी लोकगीत में निम्नांकित उन्नतीस भागों में विभाजन किया है :-

1. "देवी देवताओं और पितरों के गीत
2. ऋतुओं के गीत
3. तीर्थों के गीत
4. व्रत-उपवास और त्यौहारों के गीत
5. संस्कारों के गीत
6. विवाह के गीत
7. भाई-बहिन के गीत
8. साली-सालेल्यौं (सरहज) रा गीत

---

2. रामनरेश त्रिपाठी, कविता कौमुदी-5 (ग्रामगीत) (प्रयाग: हिन्दी मन्दिर, 1952), पृ0 45

9. पति-पत्नी के प्रेम के गीत
10. पाणिहारियों के गीत
11. प्रेम के गीत
12. चक्की पीसते समय के गीत
13. बालिकाओं के गीत
14. चरखे के गीत
15. प्रभाती गीत
16. हसजस-राधा-कृष्ण के प्रेम के गीत
17. धमालें-होली के अवसर पर पुरूषों द्वारा गेय गीत
18. देश प्रेम के गीत
19. राजकीय गीत
20. राजदरबार, मजलिस, शिकार, दारू के गीत
21. जम्मे के गीत-वीरों, सिद्ध पुरूषों, महात्माओं की स्मृति में रखे गए जागरण को "जम्मा" कहते हैं ।
22. सिद्धपुरूषों के गीत
23. ऐतिहासिक गीत, वीरों के गीत
24. ग्वालों के गीत
25. पशु-पक्षी सम्बन्धी गीत
26. शान्त रस के गीत
27. गाँव के गीत (ग्राम-गीत)
28. नाट्य गीत
29. विविध गीत"[3]

गुप्त मेवाड़ी बोली के लोकगीतों को निम्न श्रेणियों में विभक्त किया है:-

---

3. सूर्यकिरणपारीक, राजस्थानी लोकगीत (प्रयाग: हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1956), पृ0 23

1. "अनुष्ठानिक गीत - जिसके अन्तर्गत संस्कार सम्बन्धी तथा धार्मिक गीत आतेहैं ।

2. लोकगीतों में ऋतु वर्णन (होली, सावनादि ।

3. खड़ी बोली के लोकगीतों में स्त्री-पुरूषों के विशेष तथा विभिन्न क्रिया-कलापों का उल्लेख, श्रम-गीत ।

4. बालगीत - जिसके अन्तर्गत लड़के-लड़कियाँ - दोनों ही के गीत आते हैं ।"[4]

भारतीय लोक साहित्य में लोकगीतों को चार भागों में विभाजित किया है :-

1. "संस्कार विषयक गीत
2. महावारी गीत
3. सामाजिक - ऐतिहासिक गीत
4. विविध ।"[5]

उपाध्याय ने लोकगीतों को पाँच शाखाओं में वर्गीकृत किया है :-

1. "संस्कारों की दृष्टि से
2. रसानुभूति की प्रणाली से
3. ऋतुओं और व्रतों के क्रम से
4. विभिन्न जातियों के प्रकार से
5. श्रम गीत की दृष्टि से ।"[6]

---

4. सत्यागुप्त, खड़ी बोली का लोकसाहित्य(इलाहाबाद: हिन्दुस्तान ऐकेडमी, 1964), पृ0 3
5. श्याम परमार, भारतीय लोक साहित्य (दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1958), पृ0 65
6. उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका (इलाहाबाद: साहित्य भवन प्र0 लिमिटेड, 1970), पृ0 61

सत्यार्थी ने सर्वप्रथम कश्मीरी लोकगीतों का एक मौलिक वर्गीकरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है :-

1. "भाँड-नृत्य
2. नृत्य
3. बसंत-गीत
4. कथा-गीत
5. हाजियों के गीत
6. प्रणय-गीत
7. संस्कार गीत
8. पालने के गीत
9. रास-लीला
10. यज्ञोपवीत के गीत
11. नृत्य विशेष
12. कटाई के गीत
13. चरवाहों के गीत
14. ग्रामीण सन्तों के गीत
15. मृत्यु गीत ।"[7]

उपर्युक्त वर्गीकरण अध्ययन-दृष्टि से अत्यंत विस्तृत एवं अक्रमिक है ।

हण्डू ने लोकगीतों का सरल एवं वैज्ञानिक वर्गीकरण प्रस्तुत किया है:-

1. "संस्कार सम्बन्धी गीत
2. ऋतु एवं त्यौहारों के गीत
3. विभिन्न जातियों के गीत
4. ऐतिहासिक एवं राजनैतिक गीत

---

7. सत्यार्थी, बेला फूली आधी रात (दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1948), पृ0 35

6. अन्य विविध गीत ।"[8]

उपर्युक्त वर्गीकरण अन्य विद्वानों की अपेक्षाकृत अधिक उचित है एवं स्पष्ट है ।

भ्रमर का लोक गीत के विषय में मत उपयोगी है :- "लोक गीत लोक मानव के व्यक्तिगत और सामूहिक सुख-दुःख की लयात्मक अभिव्यक्ति होते हैं । लोक-कथा की भाँति ये भी लोक-कण्ठ की मौखिक परम्परा की धरोहर और लोक मानस की विविध चिन्ताधाराओं के कोश माने गए हैं ।"[9]

इन्होंने लोकगीतों को निम्नांकित वर्गों में बाँटा है :-

1. "कथा-गीत
2. नाट्य-गीत
3. नृत्य - गीत
4. वीर - गीत
5. उत्सव-गीत
6. ऋतु गीत
7. पूजा गीत और
8. व्यक्तिगत् सुख-दुःख के गीत ।"[10]

शर्मा ने किन्नर लोक गीतों को निम्न भागों में विभक्त किया है:-

1. "धर्म गाथा सम्बन्धी गीत
2. सामाजिक गीत

---

8. जवाहर लाल हण्डू, कश्मीरी और हिन्दी के लोकगीत एक तुलनात्मक अध्ययन (कुरूक्षेत्र: विशाल पब्लिकेशनज्, 1971), पृ0 36
9. रवीन्द्र भ्रमर, हिन्दी भक्ति साहित्य में लोक तत्व (दिल्ली: भारतीय साहित्य मन्दिर, 1965), पृ0 6
10. -वही- पृ0 7

3. लोक नाट्यों के गीत
4. वैयक्तिक गीत
5. जीवन दर्शन के गीत ।"[11]

हांडा ने लोकगीतों को अध्ययन सुविधा की दृष्टि से निम्न भागों में बाँटा है :-

1. "संस्कार गीत
2. त्यौहार गीत
3. ऋतु गीत
4. धार्मिक गीत
5. ज्वारी गीत
6. पारिवारिक गीत
7. सामाजिक गीत
8. नृत्य गीत
9. प्रणय गीत
10. श्रम गीत
11. प्रासंगिक गीत
12. नीति गीत
13. विविध गीत ।"[12]

उपर्युक्त वर्गीकरण भी अत्यंत विस्तृत है, किन्तु क्षेत्र-विशेष की दृष्टि से अनुचित नहीं कहा जा सकता है ।

शास्त्री जी का लोकगीतों के विषय में वर्गीकरण अवैज्ञानिक होते हुए भी अनुचित नहीं है ।

---

11. वंशी शर्मा, किन्नर लोक-साहित्य (बिलासपुर: ललित कला प्रकाशन, 1976), पृ0 49-50
12. ओमप्रकाश हांडा, पहाड़ी लोकगीत: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (नई दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1981), पृ0 68

पण्डित जी के लोक गीत विषयक वर्गीकरण पर सम्यक् दृष्टिपात् करने से यह स्पष्टतः प्रतीत होता है कि यह वर्गीकरण पूर्णतः वैज्ञानिक नहीं है । चक्की-चरखे तथा खेती सम्बन्धी गीतों को श्रमगीतों के अन्तर्गत लिया जा सकता है । भिखमंगी गीतों को जाति गीतों के अन्तर्गत लिया जा सकता है । मेलों तथा धर्म गीतों में ऋतु गीतों के अन्तर्गत लिया जा सकता है । वीर गाथा तथा गीत-कथा को लोक-गाथा के अन्तर्गत लिया जा सकता है । अतः इस वर्गीकरण को पूर्णतः उचित नहीं माना जा सकता है ।

पारीक द्वारा दिया वर्गीकरण अत्यंत विस्तृत है । देवी-देवताओं, तीर्थों, व्रत-उपवास, पर्व-त्यौहारादि के गीतों को ऋतु गीतों में लिया जा सकता है । विवाह, भाई-बहिन, साली-साले, पति-पत्नी तथा प्रेमादि के गीतों को संस्कार गीतों के अन्तर्गत लिया जा सकता है । हास्य, शृंगार एवं वीर रस के गीतों को तीन श्रेणियों में पृथक्-पृथक् विभक्त किया है । इसी प्रकार की अन्य भी कई त्रुटियाँ हैं, जिससे कि यह वर्गीकरण भी वैज्ञानिक नहीं माना जा सकता है ।

गुप्त और परमार का विभाजन भी पूर्ण रूप से उचित नहीं माना जा सकता है । परमार ने लोकगाथाओं को लोकगीतों के अन्तर्गत लिया है, जबकि लोकगाथा का लोकसाहित्य में अपना पृथक् महत्व है, अतः इसे लोक गीत के अन्तर्गत लेना उचित नहीं है ।

उपाध्याय का वर्गीकरण किसी सीमा तक उचित कहा जा सकता है, यद्यपि यह भी पूर्णतः दोष-मुक्त नहीं कहा जा सकता है । अमर और शर्मा का लोकगीतों का वर्गीकरण भी पूर्ण रूप से सही नहीं कहा जा सकता है ।

विभिन्न विद्वानों द्वारा किए गए लोकगीत के विभिन्न वर्ग, क्षेत्र-विशेष के गीतों के गहन अध्ययन एवं विश्लेषण की दृष्टि से उचित हो सकते हैं,

परन्तु ये वर्गीकरण सभी क्षेत्रों के लोकगीतों पर समान रूप से लागू नहीं होते हैं और न ही हो सकते हैं । इसी कारण बिलासपुर क्षेत्र के लोकगीतों को लेकर अलग से वर्गीकरण करने की आवश्यकता है ।

3.5 बिलासपुर क्षेत्र के लोकगीतों का वर्गीकरण:

बिलासपुर क्षेत्र में प्रचलित लोकगीतों में बहुमुखी विषयों का समावेश है । इन लोकगीतों को सीमा रेखा में बाँधना दुष्कर कार्य है । यहाँ के लोकगीतों में मानवीय भावों, विचारों तथा परिस्थितियों में साम्य दृष्टिगोचर होता है । इन गीतों में हमारी प्राचीन संस्कृति के तत्वों का समावेश है । इन गीतों का महत्व और अस्तित्व बिलासपुरी लोक के कारण है चूँकि मानव-जीवन की तीन प्रभावात्मक एवं संवेदनीय स्थितियाँ हैं - जन्म, विवाह तथा मृत्यु । यही कारण है कि ये तीनों ही भावप्रवण विषय हैं, जिनका विस्तृत वर्णन इन गीतों का प्रधान विषय रहा है ।

यद्यपि बिलासपुर क्षेत्र के लोकगीतों के सर्वग्राही एवं सर्वव्यापी गुणों के आधार पर इनका निश्चित वर्गीकरण करना अति कठिन है, तथापि अध्ययन-सुविधा हेतु निम्नांकित वर्गीकरण किया जा सकता है :-

1. संस्कार गीत
2. ऋतु गीत
3. भक्ति गीत
4. श्रम एवं जाति के गीत तथा
5. अन्य गीत

उपर्युक्त वर्गों के लोकगीतों को लोगों द्वारा किसी विशेष-साधारण अवसर, स्थिति, पर्व-उत्सव, संस्कार-अनुष्ठान इत्यादि पर अधिकतर स्त्रियों और कभी-कभी पुरूषों द्वारा भी गाया जाता है । इन गीतों में जन की भावनाओं का उदात्तीकरण हुआ है । पारिवारिक-सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रांकन इन गीतों में पर्याप्त रूप से हुआ है । उपर्युक्त लोकगीतों के विभाजन के अन्तर्गत जिन गीतों को लिया गया है, उनका यथानुसार तथा अवसरानुकूल वर्णन एवं विवरण आगे प्रस्तुत किया गया है ।